इतिहास की पाठ्यपुस्तकें

आदित्य सरकार

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा : 2005 के बाद एनसीईआरटी द्वारा निर्मित इतिहास की पाठ्यपुस्तक समीक्षा में आदित्य सरकार बताते हैं कि इन पाठ्यपुस्तकों ने पाठ्यपुस्तकों की मौजूदा संस्कृति की सीमाओं को तोड़ा है। ये किताबें बच्चों को सोचने के लिए मजबूर करती हैं और इतिहास की प्रचलित हदबंदियों को तोड़कर कुछ ऐसे विषयों का समावेश करती हैं जिनको अभी तक उपेक्षित माना जाता था।

स्कूलों में केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा प्रस्तावित और एनसीईआरटी द्वारा निर्मित पाठ्यपुस्तकों से शिक्षा प्राप्त कर इतिहास के स्नातक, प्रथम वर्ष में प्रवेश लेने वाले शिक्षार्थियों को स्कूल-स्तर और कॉलेज-स्तर के बीच जिस तरह के संक्रमण से गुजरना पड़ता है उसे लगभग सांस्कृतिक आघात कहा जा सकता है। स्नातक स्तर पर यदि गंभीरता से पढ़ाया जाए तो शिक्षार्थियों को इतिहास विवादों और अनिश्चितताओं से भरा नजर आता है और उन्हें यह पता चलता है कि इतिहासकार अतीत को मुख्यतः वैकल्पिक, विरोधाभासी या बिखरे हुए साक्ष्यों के आधार पर गढ़ते हैं। इतिहासकार एक-दूसरे के साथ बहस में उलझते हैं, प्राक्कलपना निर्मित करते हैं और ऐसा पाठ निर्मित करते हैं जिसे कभी भी अन्तिम नहीं कहा जा सकता। उनके अन्तहीन अनुमान जारी रहते हैं और अतीत की खोज करने के बाद भी उनकी कल्पनाशीलता उसे लेकर जारी रहती है। उनके द्वारा निर्मित इतिहास निरपेक्ष नहीं होता है बल्कि वह अनेक साहित्य, वैचारिक और सिलसिलेवार सरोकारों से संचालित होता है। 'इतिहासकारों के शिल्प' के पीछे के यही व्यापक झुकाव इतिहास जैसा है- या उसे जैसा होना चाहिए- के माध्यम से ध्वनित होते हैं। महाविद्यालय और विश्वविद्यालय स्तर पर इतिहास पढ़ाए जाने के दौरान शिक्षार्थी धीरे-धीरे इतिहासकारों के नामों से परिचित होते हैं और यह जानने लगते हैं कि वे किस विचार के पक्षधर हैं। इस तरह इतिहासकारों के बीच आम राय की बजाय वास्तव में इस अनुशासन के बारे में ज्यादा सीखा जा सकता है, जैसे कि हम में से अनेक लोगों ने सीखा है।

स्नातक स्तर के शिक्षार्थियों के लिए इतिहास का यह विवादपूर्ण और अनिश्चितता से भरा क्षेत्र एक सदमे की तरह होता है। क्योंकि यह स्कूली पाठ्यक्रम में आधिकारिक तौर पर प्रस्तावित इतिहास की शिक्षा से संबंधित धारणाओं का काफी आक्रामकता के साथ विरोध करता है। कई पीढ़ियों से एनसीईआरटी की इतिहास की पाठ्यपुस्तकें अधिकांशतः इतिहास का एकांगी पाठ पढ़ाती रही हैं और जिसे प्रामाणिक और सामान्यतः अपरिवर्तनीय तथ्यों और उद्धरणों से ढंका जाता रहा है। इतिहास का ऐसा पाठ जो अपने आप को सर्वाधिक आधिकारिक और व्यापक भी बताता है। ऐसे में इतिहास में क्या महत्त्वपूर्ण है यह निश्चितता पर निर्भर करने लगता है, तर्क पर नहीं। यहां समस्या विषय क्षेत्रों के चयन, उनके बारे में उद्धरणों और तथ्यों के कारण नहीं है, क्योंकि वे तो शामिल किए जाने या छोड़े जाने के किसी न किसी कम या ज्यादा विचारणीय पैमाने पर ही आधारित होते हैं। समस्या यह है कि इस तरह स्कूल स्तर पर इतिहास विषय पूर्णता या व्यापकता का दावा करता हुआ नजर आता है। मैंने जिन विद्यालयों का दौरा किया उनमें अनेक- ज्यादातर- शिक्षार्थियों के लिए इतिहास पढ़ने का अर्थ पाठ्यपुस्तकों के अधिकांश हिस्सों को रेखांकित करना और कम या ज्यादा उन्हें रटना होता है। शिक्षण के तौर-तरीकों के मूलतः सामंती और प्रावधान परक मॉडल पर आधारित परीक्षा प्रणाली जो परीक्षार्थियों के सामने प्रस्तुत प्रश्नों के तयशुदा उत्तरों की मांग करती है ने इस प्रवृत्ति को और बढ़ावा दिया है।

लेखक परिचय : दिल्ली विश्वविद्यालय से इतिहास में शिक्षा प्राप्त करने के बाद सक्रिय सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में दक्षिणपंथी राजनीति के खिलाफ एवं नर्मदा बचाओ आंदोलन में सक्रिय।

ऐसे में स्कूल से कॉलेज स्तर के इतिहास में प्रवेश बचपन से अचानक वयस्क होने में छलांग लगाने की तरह नजर आता है। इतिहास पढ़ने वाले 19 वर्षीय शिक्षार्थी के लिए अचानक से विवादों, संदेहों और टकराहटों का एक ऐसा संसार खुल जाता है जहां उसे यह चुनना होता है कि वास्तव में उसकी पक्षधरता किस ओर है। इस उम्र में यह बहुत रोमांचक और क्षमताओं का विकास करने वाला हो सकता है, लेकिन एक सोलह वर्षीय शिक्षार्थी जिसकी अतीत में दिलचस्पी है और जो स्कूल स्तर के बाद भी इस विषय को पढ़ने को लेकर कुछ धुंधले से कारणों से रोमांच महसूस करता है, उसके लिए यह विवाद और संशय आधिकारिक प्रावधानों के आगे स्थगित हो जाते हैं और सुझाए गए प्रावधानों का ही अनुकरण करता चलता है। इस तरह इतिहासकारों का संसार और स्कूल में इतिहास पढ़ने वालों की दुनिया एक-दूसरे से अलग-थलग रहती है और इन शिक्षार्थियों को वयस्क होने का इंतजार करना होता है जब वे कॉलेज शिक्षा में प्रवेश करने के बाद इतिहासकारों के साथ तादात्म्य स्थापित कर पाते हैं।

यह आकलन बहुत कटु और अवमाननाकारी लग सकता है और यह आंशिक तौर पर मेरे विद्यालय स्तर पर मानविकी के शिक्षार्थी के रूप में अपेक्षाकृत ज्यादा समकालीन अनुभवों से उपजा है। स्कूल स्तर पर बड़ी कक्षाओं में इतिहास के अपेक्षाकृत बेहतर अध्यापन के बावजूद इतिहास पढ़ना किसी रूप में आनंद देने की बजाय नीरस और बोझिल लगता है, जिसमें पुराने तथ्यों की भरमार होती है जिन्हें न सिर्फ रटना होता है बल्कि उन्हें समय-समय पर दोहराना भी पड़ता है, यह तरीका न सिर्फ सत्तावादी बल्कि बहुत बार सामंती भी होता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए यह दर्ज करना और भी अनिवार्य हो जाता है कि स्कूली बच्चों के लिए इतिहास की पाठ्यपुस्तकें लिखने वालों, शिक्षण के तौर-तरीके निर्धारित करने और उन्हें पढ़ाने वालों के सामने मौजूद चुनौतियां भी, कॉलेज शिक्षा में सामने आने वाले द्वंद्वों की तुलना में कहीं विकट हैं। स्कूली पाठ्यक्रम के लिए व्यापकता और निश्चितता के मिथक ज्यादा आकर्षित करते हैं, क्योंकि सीधी-सी बात है कि वे दुनिया के विभिन्न पहलुओं के बारे में ज्ञान का निर्माण करने में सहूलियत प्रदान करते हैं। यह बात कॉलेज शिक्षार्थियों के बारे में जितनी लागू होती है उससे कहीं ज्यादा स्कूली बच्चों के बारे में सही साबित होती है कि विविध रुचियों, क्षमताओं और जानकारी के स्तर वाले बच्चे एक ही विषय को पढ़ते हैं। पाठ्यपुस्तक की सरलता अनिवार्यतः उसकी उपयुक्ता का एक पैमाना बन जाती है। इस तरह उनकी पहुंच और विस्तार विडंबनापूर्ण ही होता है। और सरलता को निश्चितता से और विस्तार को भीड़ से जोड़ना आसान हो जाता है।

एनसीईआरटी द्वारा बनाई गई इतिहास की नई पाठ्यपुस्तकें सबसे पहले तो इस लिहाज से महत्त्वपूर्ण हैं कि वे बेहतर और उपयुक्त का एक नया मानक निर्धारित करने की कोशिश करती हैं। वे इतिहास को इतिहासकारों द्वारा जिस रूप में ग्रहण किया और लिखा जाता है और उसे शिक्षार्थियों को जिस रूप में पढ़ाया जाता है के बीच की खाली जगह को भरने की कोशिश करती हैं। जिसका आशय कुछ हद तक इस धारणा को भी नकारना है कि बच्चे जटिल अवधारणाओं, अतीत के बारे में अलग-अलग नजरियों के बारे में जानने के लिए तैयार नहीं होते, साथ ही उनमें इस धारणा को भी मानने से इनकार किया गया है कि कोई एक ऐसा 'सटीक' इतिहास है जिसे उसकी पवित्रता की रक्षा करते हुए सुरक्षित ढंग से बच्चों तक पहुंचाया जा सकता है। यह निश्चय ही शुरुआत है। कक्षा 7, 8, 10 और 12 की पाठ्यपुस्तकें अभी छपी नहीं हैं* और जो पाठ्यपुस्तकें अब तक छप चुकी हैं उनकी सफलता को लेकर भी कोई आकलन अभी हुआ नहीं है, कहने की जरूरत नहीं कि अभी उनके बारे में कोई दावा नहीं किया जा सकता। लेकिन यदि इतिहास की पाठ्यपुस्तकों में शामिल पाठों पर जिस तरह पुनर्विचार किया गया है उसी तरह स्कूलों में इतिहास को पढ़ाए जाने पर भी उतना ही ध्यान दिया जाता है तो कहा जा सकता है कि हम एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों या उन्हें मानक मानकर तैयार की गई अन्य पुस्तकों का इस्तेमाल कर स्कूलों में इतिहास शिक्षण के तौर-तरीकों में कुछ हद तक क्रांतिकारी परिवर्तन लाने की तैयारी में होंगे।

कक्षा 6, 9 और 11 की पाठ्यपुस्तकें छप चुकी हैं। इनमें से पहली पुस्तक हमारे अतीत- 1, संभवतः सबसे बड़ी चुनौती का सामना करती है। इस पुस्तक को 11 और 12 वर्ष के बच्चों को प्राचीन भारत के इतिहास से परिचित कराने की महत्त्वपूर्ण भूमिका का

* यह समीक्षा एनसीईआरटी द्वारा प्रथम दौर में (वर्ष 2007) में प्रकाशित इतिहास की पाठ्यपुस्तकों पर केन्द्रित है।

निर्वाह करने के साथ ही ऐतिहासिक चिन्तन क्या होता है जैसे प्रश्नों का सामना करने के लिए भी उन्हें तैयार करना है। पुस्तक के विषय क्षेत्र ऐसे हैं जिनसे हर वह व्यक्ति परिचित होगा जिसने स्कूल स्तर पर इतिहास पढ़ा है, जैसे शिकारी-खाद्य संग्राहक समुदाय, शुरुआती (हड़प्पा) शहरीकरण, वैदिक ग्रंथों, बुद्ध और जैन पंथ, अशोक, समुद्रगुप्त, तथा अन्य अनेक सामान्य पहलू।

लेकिन नजरिए में दो चीजें एकदम नवीन हैं। पहली, हालांकि मोटे तौर पर कालक्रम का निर्वाह किया गया है, लेकिन पुस्तक को विषय क्षेत्र के क्रम में निर्मित किया गया है न कि कालक्रम के अनुसार। उदाहरण के लिए, पहले अध्याय का शीर्षक 'क्या, कहां, कैसे और कब' बहुत प्रासंगिक है, जो सरलता के साथ प्राचीन विश्व के बारे में जानकारियां जुटाने के लिए इतिहासकारों के द्वारा काम में लिए जाने वाले स्रोतों के बारे में सुरुचिपूर्ण ढंग से विचार करता है। शुरुआती बसावटों और खेतिहर जीवन से संबंधित अध्याय का शीर्षक रखा गया है 'भोजन : संग्रह से उत्पादन तक', में इतिहास के एक खास कालखंड पर विचार करने के साथ ही एक तरह की जीवन शैली से दूसरी तरह की जीवन शैली में तक के संक्रमण पर विचार किया गया है। वेदों तथा शिलालेखों को साथ-साथ रखा गया है। इस अध्याय का शीर्षक है 'क्या बताती हैं हमें किताबें और कब्रें'। दूसरे, विषयवार सामग्री को संकलित करने पर केंद्रित करने से ये पुस्तकें समय विशेष के बारे में 'प्रत्येक महत्त्वपूर्ण जानकारी' को संकलित करने के बोझ से भी मुक्त हो गई हैं। शासक विशेष- जैसे कि सम्राट अशोक आदि, से संबंधित अध्याय विशेष सदयता के साथ काफी संक्षिप्त रखे गए हैं जो कि राजशाही और राजनीतिक सत्ता के विभिन्न रूपों से संबंधित विस्तृत अध्यायों के पूरक के रूप में आते हैं। पुस्तक चटख, रंगीन चित्रों से सज्जित है जिससे यह पाठकों के लिए और अधिक आकर्षक बन गई है (यहां समीक्ष्य तीनों पुस्तकों में इस सजावट का निर्वाह किया गया है, जो इन्हें पुरानी पुस्तकों की तुलना में और बेहतर बनाती है) और पुरातात्विक सामग्रियों तथा उद्धरणों के आकर्षक प्रस्तुतिकरण के साथ ही तस्वीरों और स्रोतों के विश्लेषण की श्रमसाध्य गतिविधियों में भी शिक्षार्थियों को संलग्न किया गया है।

यदि तीनों में से पहली पुस्तक सबसे गंभीर चुनौतियों का सामना बहुत शानदार ढंग से करती है, तो कक्षा 9 के लिए लिखी गई दूसरी पुस्तक 'भारत और समकालीन विश्व-1' बहुत सुसंगत तरीके से शिक्षण के तौर-तरीकों के लेकर नए रचनात्मक दृष्टिकोण का निर्वाह करती है। सरल शब्दों में कहें तो इस पुस्तक का उद्देश्य आधुनिकता और उसमें अंतर्निहित बदलावों की संश्लिष्ट और बहुआयामी तस्वीर को प्रस्तुत करना है। यह किताब तीन भागों में विभाजित है। पहले भाग में आधुनिक विश्व के इतिहास को बनाने में राजनीतिक विचारों और आंदोलनों की भूमिका पर विचार किया गया है, जिनमें फ्रांस की क्रांति, रूस की क्रांति और नात्सीवाद को प्रमुख आंदोलनों के रूप में अलग से प्रस्तुत किया गया है। यह विषय क्षेत्र अपने आप में नितांत रूढ़ किस्म के हैं, लेकिन उन्हें विविध तस्वीरों, चित्रों, उस समय के दस्तावेज और साहित्यिक कृतियों में से उद्धरणों के माध्यम से जिस तरह प्रस्तुत किया गया है उसे रूढ़ तो कहा ही नहीं जा सकता। दूसरा भाग आजीविका और आर्थिक व्यवस्था से संबंधित है जो मुख्यधारा के इतिहास शिक्षण के तौर-तरीकों के लिहाज से पूर्णतः नवीन है, जिसमें पर्यावरणीय और सामाजिक इतिहास से संबंधित पिछले कुछ सालों में लीक से हटकर किए गए शोधों को बहुत कुशलता और सावधानीपूर्वक शिक्षार्थियों के सामने रखा गया है। वनवासी और पशु पालक इस पाठ्यपुस्तक के लिए रूढ़िबद्ध विषय-वस्तु नहीं हैं बल्कि यहां आधुनिकता के साथ उनके जीवन में आने वाले बदलावों के जटिल अंतःसूत्र को प्रदर्शित किया गया है। इस क्रम में किसानों और खेतिहर लोगों के जीवन पर एक रुचिकर अध्याय दिया गया है जो तीन ऐतिहासिक अनुभवों की चर्चा करता है- इंग्लैण्ड में बाड़ाबंदी और आधुनिक खेती, अमरीका में खेती का विस्तार और डस्ट बाउल त्रासदी, और भारतीय किसानों और अफीम उत्पादन के बीच संबंध। यह खंड आधुनिकता के 'काले पक्ष' की विषयवस्तु को भी रेखांकित करते हुए जोर देकर और अनिवार्यता के साथ इस तथ्य के बारे में बताता है कि विकास सिर्फ एकांगी आगे ले जाने वाला आंदोलन ही नहीं है बल्कि इसके साथ विध्वंस, सामाजिक सत्ता और गरीबी के नए रूपों के बीच द्वंद्वात्मक अंतःसंबंध जुड़ा हुआ है। पुस्तक का अंतिम भाग, समूचे पाठ्यक्रम में सर्वाधिक नवाचारात्मक और विवादास्पद है, जो क्रिकेट और पहनावे के सामाजिक इतिहास की चर्चा करता है, जो बहुत ही कुशलता के साथ 'रोजमर्रा' के जीवन के विभिन्न पहलुओं का खुलासा करता है, जो अलग-अलग तरह से उन शिक्षार्थियों द्वारा बिताए जाने वाले जीवन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

अपनी पहुंच और व्याप्ति की दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्वाकांक्षी पाठ्यपुस्तक कक्षा 11 के लिए निर्मित 'विश्व इतिहास की विषयवस्तु' है। यह ऐसी पुस्तक है जिसका होना तभी सार्थक होगा जबकि इसके साथ परीक्षा तथा मूल्यांकन के लिए रचनात्मक दृष्टिकोण अपनाया जाए, क्योंकि यह एक बड़ी किताब है और तीनों में से यही एक ऐसी किताब है जिसके हल्की-सी बोझिल होने की भी आशंका है। हालांकि यह भी एक बेहतरीन किताब है, जो इतिहास के विशद काल खंड, मानव सभ्यता की शुरुआत से लेकर विश्व युद्ध के बाद तीसरी दुनिया के आधुनिकीकरण तक के समूचे कालखंड पर विहंगम

दृष्टि डालती है। यह भूमंडलीय इतिहास को लेकर एक ऐसा प्रयास है जो 'सामाजिक बदलाव' को लेकर स्नातक स्तर के ऑनर्स कोर्स के समान है, लेकिन इसे ज्यादा चतुराई और कुशलता के साथ समायोजित किया गया है। भूमंडलीय इतिहास को अलग-अलग विषय क्षेत्रों में विभाजित किया गया है, आरंभिक शहरीकरण, रोम का साम्राज्य, मंगोल, इस्लाम का उदय, सामंतवाद, नए विश्व की खोज और 'संस्कृतियों में टकराव' औद्योगिकरण, मूल निवासियों का विस्थापन और चीन तथा जापान में आधुनिक परिवर्तन आदि कुछ उदाहरण हैं। प्रत्येक विषय क्षेत्र एक विस्तृत काल सूची के साथ शुरू होता है, जो एक ही काल खंड में विश्व के अलग-अलग भागों में होने वाली प्रमुख घटनाओं पर विहंगम दृष्टि डालता है। उदाहरण के लिए 1820 से 1830 का काल खंड, अफ्रीका : पश्चिम अफ्रीका में लाइबेरिया को मुक्त कराए गए गुलामों का घर के रूप में स्थापित किया गया (1822)। यूरोप : लुई ब्रेल ने हाथों से पढ़ने की व्यवस्था खोजी (1823), इंग्लैंड में यात्री रेल गाड़ी की शुरुआत (1825)। एशिया : डचों के खिलाफ जापानियों का विद्रोह (1825-30)। दक्षिण एशिया- सती प्रथा को गैर कानूनी घोषित किया गया (1829)। अमरीका : सीमोन बोलीवार ने वेनेजुएला की आजादी का नेतृत्व किया (1821)। इस तरह की काल सूची अपने पाठकों को एक ही समय में अलग-अलग स्थानों पर होने वाली ऐतिहासिक घटनाओं की समकालिकता, अंतः संबंध और असंगतता से अच्छी तरह से परिचित कराती है। कक्षा 9 की पाठ्यपुस्तक की तरह यह भी एक ऐसी पुस्तक है जो प्रमुख ऐतिहासिक प्रक्रियाओं और युगों के बारे में बताने के लिए शिक्षण के परम्परागत तौर तरीकों का निर्वाह नहीं करती है : उदाहरण के लिए मूल निवासियों का विस्थापन और 'बाहरी साम्राज्यों का उदय' मानविकी की वरिष्ठ कक्षाओं के शिक्षार्थियों के सामने अध्ययन के लिए अलग और नए विषयों के रूप में प्रस्तुत किए गए हैं।

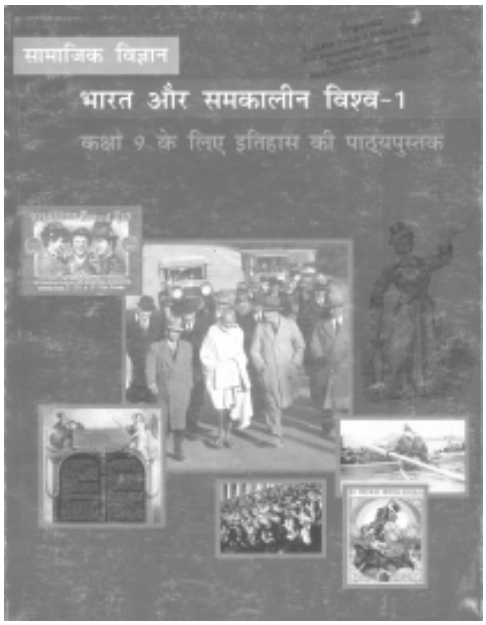

स्कूलों में इतिहास की शिक्षा का नया मानक तय करने के प्रयास की दिशा में इन पुस्तकों में प्रस्तुत उन विषयों और परियोजनाओं के साथ शामिल उन प्रमुख प्रस्थानों और सरोकारों की बात करूंगा जो उन्हें तार्किकता और समग्रता से एकीकृत और स्थाई प्रयास के रूप में बांधे रखती हैं।

इतिहास द्वारा प्रस्तुत एक बड़ी चुनौती और आनंद अपरिचय है। हाल ही कार्लो गिंसबर्ग द्वारा खोजा गया 'अजनबी बनाने' के साहित्यिक और प्रणाली विज्ञान संबंधी उपकरण इतिहासकारों के शिल्प का केंद्रीय अंग है। एक मायने में सभी आलोचनात्मक विचारों का यह गुण होता है- कि जो 'सामान्य समझ' की सी बात नजर आती है वही अजनबी लगने लगे, यानी ऐसी चीजों के बारे में प्रश्न करना जिन पर हम कभी बहुत ध्यान ही नहीं देते। इस उपकरण का एक खास पक्ष जिसका सहारा इतिहासकार लेते हैं वह इस बात को उद्घाटित करना है कि चीजों का अतीत होता है और वे जहां भी थीं (या हैं) वहां तक काफी टकराहटों और जटिल प्रक्रियाओं के बाद पहुंची हैं। यह एक सरोकार है जो एनसीईआरटी की यहां समीक्ष्य इन तीनों की किताबों में प्रकट होता है। यह एक ऐसा सरोकार है जो संभवतः कक्षा छह की किताब में सबसे ज्यादा स्पष्ट नजर आता है। हमारे अतीत-1 का प्रत्येक अध्याय एक बच्चे से शुरू होता है (जिसे एक रंगीन बॉक्स में उसकी फोटो के साथ दिखाया गया है), जिसका सामना किसी न किसी ऐसी बात से हो जाता है जो रोजमर्रा की चीजों के बीच किसी एक बात पर नए सिरे से सोचने के लिए प्रेरित करती है। किताब की पहली पंक्तियां कुछ इस प्रकार हैं- ''रशीदा बैठी अखबार पढ़ रही थी। अचानक उसकी निगाह एक सुर्खी पर पड़ी 'सौ साल पहले'। वह सोचने लगी कि यह कोई कैसे जान सकता है कि इतने वर्षों पहले क्या हुआ था ?''- यह उस संक्षिप्त जानकारी का प्रस्थान बिंदु बन जाता है जो बहुत सरलतापूर्वक लेकिन बड़ी ही कुशलता के साथ यह बताता है कि अतीत के बारे में हम जो भी जानकारी रखते हैं वह हम कैसे प्राप्त करते हैं- ऐतिहासिक साक्ष्यों के बारे में जानकारी जो बोझिल या प्रावधानात्मक नहीं होती बल्कि ऐतिहासिक जानकारी को ऐसे प्रस्तुत करती है कि वह बहुत सुगम और रोमांचक लगने लगती है। अध्याय चार के अंत में एक गतिविधि दी गई है जिसमें शिक्षार्थियों से अपनी बस्ती की पुरानी इमारतों को पहचानने और यह पता लगाने के लिए कहा गया है कि यह इमारतें कितनी पुरानी हैं और उनकी देखभाल कौन करता है- इस तरह रोजमर्रा के जीवन के एक सामान्य तथ्य को अजनबी बनाने के साथ ही साथ एक नई चुनौती भी उनके सामने प्रस्तुत की गई है, जिसे लेकर संभवतः बच्चों के मन में इससे पहले कभी कोई सवाल उठा ही न हो।

इस तरह सामान्य बातों के साथ अपरिचय प्रस्तुत करने के अन्य पहलू भी हो सकते हैं। कक्षा 9 की पाठ्यपुस्तक में नात्सी जर्मनी पर एक अध्याय में राइख के विद्यालयों में युवा पीढ़ी के प्रशिक्षण के बारे में बताने के बाद नस्लवाद के विरोध में एक चर्चा रखी गई है। इस अध्याय के साथ ऐसे गतिविधि बॉक्स हैं जो संभवतः शिक्षण के तौर-तरीकों की दृष्टि से सर्वाधिक कल्पनाशील प्रयोग कहे जा सकते हैं। ऐसे ही एक बॉक्स में पूछा गया है- अगर आप ऐसी किसी कक्षा में होते तो यहूदियों के प्रति आपका रवैया कैसा होता ? क्या आपने कभी सोचा है कि आपके जान-पहचान वाले अन्य समुदायों के बारे में क्या सोचते हैं ? उन्होंने इस तरह की छवियां कहां से हासिल की हैं ? यह अनुच्छेद जितना नजर आता है उससे कहीं ज्यादा कौशल और संवेदनशीलता की मांग करता है, क्योंकि इसी बात को सहनशीलता और सम्मान के बारे में भारी-भरकम बातों के बोझ से दबाया जा सकता था। लेकिन यहां इस तरह के किन्हीं प्रावधानों या अपेक्षाओं की मांग नहीं की गई है, बल्कि सामान्य समझ से जुड़े सवालों के माध्यम से सोचने के लिए कुछ प्रश्न छोड़कर इसे और भी बेहतर ढंग से प्रस्तुत किया गया है। इसी तरह जानी-पहचानी बातों पर पुनर्विचार की आवश्यकता से जुड़ा उदाहरण कक्षा 11 की पुस्तक में 'संस्कृतियों का टकराव' अध्याय के एक अनुच्छेद में देखने को मिलता है, जिसमें यूरोप और नए विश्व के बीच शुरुआती संघर्षों के बारे में बताया गया है। एक इतना ही मार्मिक उदाहरण है, जिसमें ब्राजील का एक मूल निवासी फ्रांसीसी पादरी से पूछता है कि उनके देश के लोग ''लकड़ी की तलाश'' में इतनी दूर से यहां क्यों आते हैं ? क्या उनके अपने देश में लकड़ी नहीं है ? इतना ही नहीं वह आगे कहता है ''मुझे लगता है तुम बिलकुल बावले हो। तुम लंबा समुद्र पार करते हो, घोर परेशानियां झेलते हो और इतना कठिन परिश्रम करते हो, किसलिए ? अपने बच्चों के लिए धन इकट्ठा करने के लिए ही न! क्या जिस भूमि ने तुम्हें पाला-पोसा और बड़ा किया है वह तुम्हारे बच्चों का पेट भरने के लिए पर्याप्त नहीं है ?'' यहां धन संपदा को हासिल करने की प्रवृत्ति ने प्रकृति के नियम की तरह का जो दर्जा हासिल कर लिया था, उसे एक ऐसे व्यक्ति की नजर से देखा गया है जो इसका अभ्यस्त नहीं है और यह प्रवृत्ति अपना वह दर्जा खोती हुई नजर आती है। इसके साथ ही शिक्षार्थियों से इसी तरह की प्रक्रियाओं के बारे में विभिन्न दृष्टिकोणों से विचार करने के लिए कहा गया है। उन्हें बताया गया कि तथ्य अपने आप में पूर्ण नहीं होते हैं, इसी तरह के तथ्यों के साथ यदि इसके ठीक विपरीत नजरिए से विचार किया जाए तो वे यथार्थ की दूसरी ही तस्वीर से रूबरू हो सकते हैं।

इन पाठ्यपुस्तकों में विभिन्न तर्कों के पक्ष में निर्मित रेखाचित्रों और अतीत के कल्पनाशील पुनर्सृजन से संबंधित विभिन्न स्रोतों की वास्तव में भरमार है। इनमें मोहनजोदड़ों की तस्वीरें, उपनिषदों के अंश, अशोककालीन शिलालेख, प्राचीन भारतीय हस्तकला एवं शिल्प के नमूनों का सुंदर पुनर्सृजन, फ्रांस की क्रांति के समय के राजनीतिक चित्र जिनके साथ शिक्षार्थियों को उनके विश्लेषण की गतिविधि भी दी गई है, बीसवीं सदी के आरंभिक दौर में बस्तर के आदिवासियों के संघर्ष की मौखिक विवरण, मध्ययुगीन यूरोप के एक कस्बे का सत्रहवीं शताब्दी में बनाया हुआ एक मानचित्र, कपास की कताई और बुनाई के लिए ट्रेडमिल चलाती स्त्री का रेखाचित्र, नौवीं शताब्दी में चर्मपत्र पर लिखे कुरान का एक पृष्ठ आदि शामिल हैं। यह इन पुस्तकों में बिखरे पड़े ऐतिहासिक स्रोतों के कुछ बेतरतीब से उदाहरण हैं, लेकिन जो ऐतिहासिक साक्ष्यों में व्याप्त रोमांच और इन पाठ्यपुस्तकों में दर्ज इतिहास के पुनर्सृजन के लिए काम में लाए गए स्रोतों की सम्पन्नता की भी झलक देते हैं। इस तरह इतिहास जानने की प्रक्रिया कई स्थानों पर उसके निर्माण की प्रक्रिया भी बन जाती है। इस बिंदु पर मैं लौट कर आऊंगा।

ये पाठ्यपुस्तकें इतिहास में किन बातों को शामिल किया जा सकता है और किन्हें नहीं, इस संबंध में बनी-बनाई धारणाओं और रूढ़ियों को भी तोड़ती हैं। जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है। ये पुस्तकें अपने असाधारण विस्तार और व्यापकता के बावजूद पूर्णता का दावा नहीं करती हैं। इस खास अपेक्षा से इनकार, इन पुस्तकों के लेखकों को गहरी सामर्थ्य देने वाला साबित हुआ क्योंकि अब उन मुद्दों की छानबीन करने की स्वतंत्रता का उन्होंने भरपूर इस्तेमाल किया, जिन्हें अब तक स्कूली पाठ्यपुस्तकों के इतिहास के साथ जोड़ कर देखा तक नहीं गया था। किन्हीं मुद्दों को छोड़ने और उनके पीछे के पैमानों को लेकर सवाल उठाए जाने की गुंजाइश हमेशा रहती है- उदाहरण के लिए यह पूछा जा सकता है कि प्राचीन ग्रीक सभ्यता की चर्चा क्यों नहीं की गई है जबकि चंगेज खान और मंगोलों को पूरा एक अध्याय दिया गया है। यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका जवाब पूर्व में की गई उपेक्षा के आधार पर दिया जा सकता है; इसी तरह नात्सीवाद से संबंधित अध्याय में जर्मनी के अलावा इटली तथा यूरोप के अन्य किसी भी देश में इसके उभार के बारे में चर्चा का जिक्र तक नहीं किया जाना एक अन्य गंभीर भूल है। इसके बावजूद पाठ्यपुस्तकों को कालक्रमवार निर्मित करने की बजाय विषयवार निर्मित करने का निर्णय पूर्णतः फलदायी साबित हुआ है (इस तरह ये पुस्तकें इस विचार को भी नकारती हैं कि कालक्रम पूर्णता के लिए ज्यादा सुरक्षित आधार उपलब्ध कराता है और बेतरतीब चयन की गुंजाइश कम छोड़ता है)।

इसका सबसे समृद्ध उदाहरण कक्षा 9 की पाठ्यपुस्तक का अंतिम

खंड है, जिसमें क्रिकेट और वेशभूषा के इतिहास की पड़ताल की गई है। पुरानी पाठ्यपुस्तकों में इस तरह के अध्यायों को शामिल किए जाने की कल्पना तक नहीं की जा सकती थी। 'रोजमर्रा के जीवन' का इतिहास, फैशन के उपभोग, सौंदर्य की धारणाओं, शारीरिक संस्कृति और खेल का इतिहास समय के साथ अनुशासन के रूप में इतिहास का अंग बनता चला गया है और इसने अपनी सीमाओं का विस्तार भी किया है। इतिहासकार इस बात को मानने लगे हैं कि सभी चीजों का एक इतिहास होता है जिसकी गंभीरता के साथ छानबीन किए जाने की जरूरत होती है, इस बारे में हुए विपुल शोध कार्यों ने इसकी वैधता को प्रमाणित भी कर दिया है, जिनके द्वारा अक्सर अतीत की विभिन्न घटनाओं और प्रक्रियाओं के बारे में चौंकाने वाली अंतःक्रियाओं का पता चलता रहा है। लेकिन यह वह अंतर्दृष्टि है जिससे स्कूली शिक्षार्थियों को वंचित रखा गया है और इतिहास को लिखे जाने और स्कूली शिक्षार्थियों को इतिहास पढ़ाए जाने के बीच के उसी विभाजन को हमेशा से पुनःस्थापित किया जाता रहा है। यह ऐसी पहली पाठ्यपुस्तकें हैं, जिन्होंने इस परिपाटी को तोड़ा है।

ये पाठ्यपुस्तकें शिक्षार्थियों को संभावित ऐतिहासिक अंतर्दृष्टि के निर्माण की प्रक्रिया से जिस तरह सक्रिय रूप से जोड़ती हैं, वह संभवतः इन पुस्तकों का सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू है। इसके लिए न सिर्फ स्रोतों के अंशों की नवाचारात्मक विधियों से व्याख्या करने के लिए उन्हें निर्देशित किया गया है बल्कि अतीत की कल्पना करने के लिए उनकी क्षमताओं का खुल कर आह्वान भी किया गया है। एक अनुशासन के रूप में इतिहास का ज्यादा स्वाभाविक पक्ष- सीमित साक्ष्यों के आधार पर ज्यादा विश्वसनीय और सुसंगत अनुमान लगाने की क्षमता है- जिस पर तीनों किताबों में पर्याप्त जोर दिया गया है। लेकिन इतिहास का इसी तरह कम स्वाभाविक लेकिन संभवतः ज्यादा आधारभूत पक्ष भी है- और यह पक्ष कल्पनाशीलता, जिसमें अतीत की बुनावट की कल्पना इस तरह की जानी है कि वह उपलब्ध साक्ष्यों के दायरे में हो और जिसे उनके आधार पर प्रामाणित भी किया जा सके। आखिर अतीत कैसा दिखता, सुनाई देता और महसूस होता था इसके बारे में किसी तरह के सम्मोहन के बिना तो शायद बहुत कम ही लोग इतिहास में रुचि लेना चाहेंगे। यह सच कि इतिहास के बारे में हमारी कल्पना कभी भी उसकी वास्तविकता पर पूर्णतः सटीक नहीं बैठ सकती, फिर भी इस सम्मोहन को तोड़ नहीं सकता, बल्कि वह उसे और ज्यादा अन्वेषण के लिए प्रेरित ही करेगा। और ये पुस्तकें खासतौर से यही करती हैं।

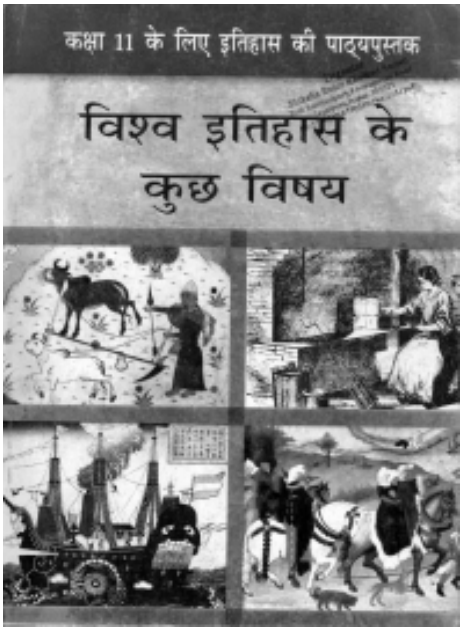

भारत और समकालीन इतिहास-1 में पहनावे के इतिहास संबंधी अध्याय में स्वदेशी आंदोलन पर चर्चा के साथ एक छोटा-सा बॉक्स दिया गया है जिसमें इतना भर पूछा गया है कि- यदि आप एक गरीब किसान होते तो क्या आप मिल के बने कपड़े को त्यागने का निर्णय आसानी से ले सकते थे ? यह प्रश्न जितना सरल नजर आता है उतना है नहीं, क्योंकि यह भारतीय राष्ट्रवाद के एक खास तरह के इतिहास पर सवाल खड़ा कर देता है और एक खास तरह के सामाजिक तनाव के बीच गहरी राहत प्रदान करता है। यदि कोई शिक्षार्थी इस प्रश्न की गहरी पड़ताल करने का निर्णय लेता है तो उसके लिए भारतीय राष्ट्रवाद के उस एकांगी इतिहास पर यकीन करना संभव नहीं रह जाएगा जो उस समय को औपनिवेशिक ताकत और भारतीय प्रतिरोध के रूप में दर्ज करता रहा है। तब राष्ट्रवाद एक बहुआयामी और ज्यादा जटिल प्रक्रिया के रूप में समझ में आएगा। यहां जिस किसान की बात की गई है वह हिंदू है या मुसलमान ? क्या उसके पास अपनी जमीन है या वह साझे में खेती करता है ? क्या वह राष्ट्रवादी आंदोलन से प्रभावित है या वह लंकाशायर मिल के प्रति कृतज्ञ अनुभव करता है कि उसने इतना सस्ता कपड़ा उपलब्ध कराया है ? वह क्या चुनता है और उसके क्या परिणाम हो सकते हैं ? इन हालात के बीच में क्या निर्णय लिया जाए, इसके बारे में स्वयं कल्पना करना इस तरह के प्रश्नों से कहीं बेहतर है जो यह घोषणा करते हों कि क्या गरीब किसान भी मिल द्वारा निर्मित वस्त्रों का त्याग करने के लिए तैयार थे ? इसकी तुलना में पहले वाला प्रश्न शिक्षार्थियों से सभी गरीब किसानों के बारे में इस तरह के किसी सामान्यीकृत जवाब की मांग नहीं करता है। बल्कि यह शिक्षार्थी को समस्या के अमूर्तन की ओर ले जाने की बजाय उस ऐतिहासिक परिस्थिति में खुद को रखकर कल्पना करने के लिए प्रेरित करता है कि उस परिस्थिति से गुजरने वाला व्यक्ति वास्तविक जीवन में दरअसल क्या चुन सकता है। यह एक चुनौती है जो काफी रोमांचक भी है।

जाहिर है कि यदि हम स्कूलों में इतिहास शिक्षण के तौर तरीकों में किसी आमूल बदलाव की

ओर जा रहे हैं तो यह तो मात्र शुरुआत है, अभी और बहुत कुछ किए जाने की जरूरत है। यदि केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की परीक्षा प्रणाली में आमूल परिवर्तन नहीं लाया जाता है तो अपनी तमाम उत्कृष्टता के बावजूद यह किताबें कोई नतीजे नहीं दे पाएंगी और स्कूल स्तर पर इतिहास के शिक्षार्थियों की बोरियत को मिटाने में भी यह पूरी तरह विफल साबित हो जाएंगी। यदि प्राक्कल्पना गढ़ने के लिए स्रोतों के आधार पर कल्पना करने के श्रम को, ऐतिहासिक निष्कर्षों के खुलेपन को स्वीकार करने के लिए तैयार रहने की तैयारी को साल के अंत में परीक्षा के पर्चों में अभिव्यक्ति करने के लिए स्थान नहीं मिल पाता है तो यह सारा श्रम एक भटकाव मात्र साबित होगा जिसमें कभी-कभी शिक्षार्थी आनंद का अनुभव करेंगे तो कभी इसके कारण थकान महसूस करेंगे। मेरी साल के अंत में होने वाली परीक्षा को लेकर यादें काफी कटु हैं जिनमें हमें सभी सवालों के खास शब्द सीमा में जवाब देने होते थे, ऐसे जवाब जो पहले से तय होते थे जिन्हें हमें उगलना होता था। इतिहास के इस नए पाठ्यक्रम की सफलता के लिए यह बहुत जरूरी है कि इसके मूल्यांकन के लिए भी इतने ही संवेदनशील उपकरण विकसित किए जाएं, हो सकता है उनकी बात करना जितना आसान है उन्हें विकसित करना उतना आसान न हो। इन नई किताबों को लेकर चिन्ता का एक अन्य कारण अपने दृष्टिकोण की ताजगी के साथ यह किताबें अध्यापकों के सामने जिस तरह की चुनौती खड़ी करती हैं उसे लेकर है। अधिकांश अध्यापक काम के बोझ से दबे हैं और उनमें से अधिकांश बरसों से पुराने पाठ्यक्रम को पढ़ाने में खास तरह की निपुणता हासिल कर चुके हैं। अध्यापकों, पाठ्यपुस्तकों के लेखकों, शिक्षाविदों और निश्चय ही शिक्षार्थियों को भी शामिल करते हुए लगातार प्रशिक्षण और कार्यशालाओं के माध्यम से व्यापक चर्चाएं यदि नहीं कराई जाती हैं तो बहुत संभव है कि इतिहास शिक्षण के यह नए तौर-तरीके संकट से घिर जाएं। मार्क्स का वक्तव्य बिना प्रसंग के ही याद आता है 'शिक्षकों को शिक्षित किया जाना चाहिए' और यह बात शिक्षकों के संदर्भ में नए पाठ्यक्रम पर और शिक्षार्थियों के संदर्भ में शिक्षकों पर लागू होती है।

इन नई पुस्तकों से प्राप्त स्वतंत्रता, चुनौतियों और रोमांच का बेहतरीन समावेश संभवतः कक्षा 6 की किताब हमारे अतीत-1 की इस गतिविधि में मिलता है, जिसका शीर्षक है **कल्पना करो :** आप दीवार में एक छेद में से वैशाली की सभा का दृश्य देख रहे हैं, जिसमें मगध के राजा द्वारा किए गए आक्रमण का सामना कैसे किया जाए इस बारे में चर्चा चल रही है। आपने क्या सुना, बताएं।

एक छेद में से अतीत की दीवार के पार झांकना। एक ऐसे वार्तालाप का अनुमान करना जो आपको कभी सुनने को नहीं मिल सकता, जिसे आप समझ नहीं सकते। उसके बारे में बताना जिसमें तमाम गलतियों, गलतफहमियों की संभावना है लेकिन इससे आपकी अंतर्दृष्टि विकसित होती है। इतिहास की नई पाठ्यपुस्तकें अपने शिक्षार्थियों, पाठकों और हम सबको यही बताती हैं कि इतिहास दरअसल यही है। ◆

भाषान्तर : देवयानी

(कन्टम्परेरी एज्युकेशन डायलॉग से साभार)

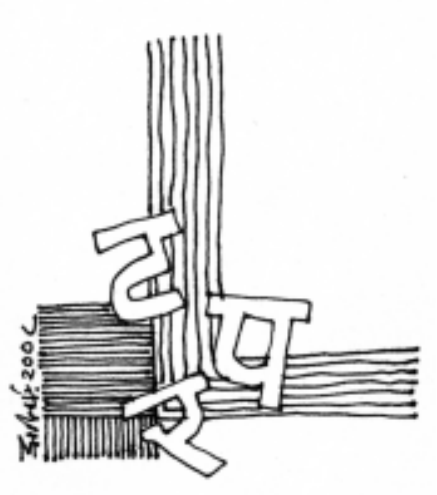

कविता

अब भी ढूढ़ रहे गंतव्य

दूर आ चुके हैं हम
खड्डे भरे रास्तों में ठोकर खाते
अब भी ढूढ़ रहे गंतव्य
कौनसी दिशा सही है
पूरब जहां सूरज उगता है
या जहां रोशनी और ताप से जुदा होते हम
या दिशाओं के बीच हैं सही रास्ते...

लाल्टू

('अब भी ढूढ़ रहे गंतव्य' कविता का अंश)